P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-8* (Part-1) November- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

सार्वभौमिक धर्म के लिए शिक्षा

राजेन्द्र कुमार जायसवाल
सहायक प्राध्यापक,
शिक्षा–शास्त्र विभाग,
श्री गणेशराय पी.जी. कालेज
डोभी, जौनपुर

आकांक्षा गुप्ता
शोध–छात्रा,
शिक्षा–शास्त्र विभाग,
श्री गणेशराय पी.जी. कालेज,
डोभी, जौनपुर

सारांश

संसार के विविध भूखण्डों में अपने–अपने धर्म में विश्वास करने वाले लोग निवास करते हैं। अतः सार्वभौमिक धर्म की परिभाषा करने में वही परिभाषा सफल हो सकता है, जो संसार के सभी उच्च अथवा निम्न सभी धर्मों की व्याख्या करने में सफल हो। मैलवे ने कहा कि अपने से परे शक्ति में मनुष्य का वह विश्वास धर्म है, जिसके द्वारा वह अपनी संवेगात्मक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि और जीवन की स्थिरता प्राप्त करता है तथा जिसे वह उपासना एवं सेवा के माध्यम से प्रकट करता है।"

यद्यपि कोई धर्म मतानुयायी अपने धर्म के अलावा किसी दूसरे धर्म के मत को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होगा। लेकिन यदि विभिन्न धर्म की विशिष्टताओं को 'सर्वजन सुखाय और सर्वजन हिताय' को दृष्टि में रखकर संगठित किया जाये तो निश्चित ही हम एक धर्म की स्थापना में पूर्ण सफल होंगे और यह कार्य शिक्षा द्वारा ही सम्भव होगा। सम्पूर्ण विश्व के हर देश के विद्यालयों, विश्वविद्यालयों में प्रारम्भिक कक्षा से लेकर विश्वविद्यालय स्तर पर उसके पाठ्यक्रम, शिक्षण उद्देश्य, शिक्षण विधि आदि का स्वरूप नये सिरे से निर्मित करना होगा। प्रस्तुत शोध–पत्र में इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर शोधकर्त्ता द्वारा अपना विचार प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द : सार्वभौमिक धर्म, सर्वस्त्र विद्यमान, विविध भूखण्डों, नासतोविधाते भावो ना भावो विधाते सतः, ज्ञानमतवाद विहीन।

प्रस्तावना

सर्वप्रथम हमें यह देखना है कि धर्म क्या है? धर्म को विदेशी और भारतीय दार्शनिकों और विचारकों ने अपनी–अपनी दृष्टि से देखने का प्रयास किया है। विदेशी या पाश्चात्य विचारकों में जे.वी. 'प्राट ने तो धर्म की व्यापकता का अनुभव करते हुए इसकी परिभाषा करने में अपने घुटने ही टेक दिये। वे कहते हैं, 'सामान्यता धर्म नाम से जो प्रचलित शब्द प्रायः सबके होठों पर रहता है और जिनसे मानव जीवन के सबसे प्रत्यक्ष व्यापार का बोध होता है, फिर भी यह इतना कठिन है इसे परिभाषित करना अत्यन्त कठिन है।'

हीगल ने कहा कि 'अपूर्ण बुद्धि द्वारा अपने स्वरूप का पूर्ण बुद्धि के रूप में ज्ञान ही धर्म है।' तो वहीं मैक्समूलर ने कहा 'धर्म वह मानसिक प्रवृत्ति है, जो मनुष्य को अनन्त सत्ता का ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम सिद्ध होती है। इसी प्रकार काण्ट महोदय ने कहा है कि 'हमारे दैनिक कर्तव्यों का ईश्वरीय आदेशों के रूप में अभिज्ञान ही धर्म है।' मार्टिन्यू ने धर्म को परिभाषित करते हुए कहा 'धर्म शाश्वत ईश्वर में विश्वास है।' मैलवे ने कहा 'अपने से परे शक्ति में मनुष्य का वह विश्वास धर्म है, जिसके द्वारा वह अपनी संवेगात्मक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि और जीवन की स्थिरता प्राप्त करता है तथा जिसे वह उपासना एवं सेवा के माध्यम से प्रकट करता है।

उक्त परिभाषाओं में हम देखते हैं कि किसी में भावना पर जोर दिया गया है, किसी में ज्ञानात्मक और क्रियात्मक पक्ष पर। उक्त वर्णित विदेशी विद्वानों की किसी भी परिभाषा में धर्म के सभी पक्षों पर ध्यान नहीं दिया गया है। अतः हम कह सकते हैं कि धर्म की वही परिभाषा सही हो सकती है जो सभी धर्मों पर लागू हो। संसार के विविध भूखण्डों में अपने–अपने धर्म हैं। जैसे हिन्दू धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म, यहूदी धर्म, सिक्ख, बौद्ध, जैन आदि। पूरे विश्व में अनेक धर्मों में विश्वास करने वाले लोग निवास करते हैं। अतः सार्वभौमिक धर्म की परिभाषा करने में वहीं परिभाषा सफल हो सकती है, जो संसार के सभी उच्च अथवा निम्न सभी धर्मों की व्याख्या करने में सफल हो। धर्म की परिभाषा करने वाले को केवल अपने धर्म की विशेषताओं का उल्लेख करने तक ही सीमित नहीं रहना होगा। और न उसे सभी धर्मों की अच्छाइयों को चुनकर सबके लिए एक धर्म को गंभीरता के साथ परिभाषित करना होगा, जो सब पर, पूरे भूमण्डल के लोगों पर लागू हो सके।

संसार के सभी देशों के मनुष्यों में बहुत सी अनेकताएँ होते हुए भी अनेक दृष्टियों से एकता भी विद्यमान है। पूरे विश्व अर्थात् सम्पूर्ण भूमण्डल के लिए किसी एक धर्म की संकल्पना पर विचार करते समय हमें मानवीय अनेकताओं पर अधिक विचार न करके एकताओं पर ध्यान देना होगा और सम्पूर्ण विश्व के लिए किसी एक धर्म की शिक्षा देने की व्यूह रचना करते समय इसी मानवीय एकता के बिन्दुओं को आधार बनाना होगा। हमारे देश के विचारकों और मनीषियों ने विश्व–एकता, विश्व परिवार, पूरी वसुधा को एक कुटुम्ब के रूप में पहले ही कल्पना कर ली थी।

यद्यपि गाँधी जी केवल धार्मिक संत नहीं थे और न उन्होंने विश्व धर्म की कल्पना ही की थी। हाँ इतना अवश्य है कि धर्म के एक विशिष्ट तत्व अहिंसा पर उन्होंने अवश्य जोर दिया है। सत्य को वे अपना आदर्श मानते हैं। उनके ये सत्य और अहिंसा के सिद्धांत विश्व धर्म के आधार अवश्य हो सकते हैं। संसार के सभी धर्म किसी परम सत्ता में विश्वास करते हैं, हाँ इस सत्ता के स्वरूप और नाम में पृथकता अवश्य हो सकती है। गाँधी जी कहते हैं 'सत्य ही ईश्वर है। ईश्वर सत्य के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता; क्योंकि जो ईश्वर है वह सर्वशक्तिमान है, सर्वस्त्र विद्यमान है। सत्य ही एक ऐसा तत्व है, जो बदलता नहीं, यही गुण ईश्वर का भी है।' गाँधी का यह सिद्धान्त गीता पर आधारित है 'नासतो विधते भावों विधते सतः।'

विश्व धर्म की संकल्पना में रविन्द्रनाथ टैगोर का यह कथन विशेष महत्वपूर्ण है 'मनुष्य के जीवन में ही मनुष्य और ब्रह्म का मिलन होना चाहिए। यहीं पर असीम और ससीम का मेल होना चाहिए, यह तभी हो सकता है, जब मनुष्य अपने अनन्त होने की भावना जागृत करे। रंग, भेद, देश काल की सीमाओं को तोड़कर अनन्त प्रेम की प्रेरणा से सबसे बन्धुत्व का व्यवहार करे, सारा विश्व एक ही ब्रह्म की लीला है। उसमें पराया कौन हो सकता है। सब में एक ही प्राण और एक ही हृदय व्याप्त है, एक ही अनेकता के माध्यम से अपने को व्यक्त कर रहा है। तभी तो सृष्टि है। ऐसी देशा में विश्व बन्धुत्व ही जीवन का लक्ष्य होना चाहिए, इसी से सब कर्मों की प्रेरणा मिलती है।

विश्व धर्म के स्वरूप निर्माण में टैगोर के मानवीय धर्म के तत्वों को आधार के रूप में माना जा सकता है। उन्होंने कहा है कि 'ऐसा धर्म मानवीय धर्म है, जिसमें ईश्वर की व्याख्या मानवीय रूप में की जाती है। इनके अनुसार ईश्वर की अभिव्यक्ति मानव में पूर्ण रूप से हो पाई है। अतः मानव की पूजा ही ईश्वर की पूजा है। टैगोर ने ईश्वर के सारे आरोपण करके उसे ईश्वर बना दिया। विश्व धर्म का मुख्य तत्व मानव और मानवता को ही माना है।

बौद्ध धर्म को मानवीय धर्म इसलिए कहा गया है कि इसमें आचरण को महान स्थान दिया गया है। मनुष्य का धर्म ही मानव सेवा है। मनुष्य को मनुष्य से प्रेम करना चाहिए, यह बौद्ध धर्म का एक आवश्यक अंग है।

विश्व धर्म के आधुनिक अर्थ में ईसाईयों के स्तर पर ही गैर ईसाईयों को भी रखा गया, जिसे 1893 में विश्व धर्म संसद शिकागो इलिनोंइस में शुरू किया गया। इसमें भारतीय विचार इस प्रकार व्यक्त किये गये कि सारी दुनियाँ हैरान हो गई। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था 'ज्ञानमतवाद' विहीन है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि वह मतों से घृणा करता है। इसका अर्थ सिर्फ यह है कि (ज्ञान द्वारा) मतों से परे और ऊपर की स्थिति को प्राप्त कर लिया गया है। ज्ञानी विनाश करने की इच्छा नहीं रखता अपितु सभी की सहायता करता है। जिस प्रकार सभी नदियाँ अपना जल सागर में प्रवाहित करती हैं और उससे एकाभूत हो जाती हैं, उसी प्रकार सभी सम्प्रदायों में ज्ञान की उपलब्धि होनी चाहिए और उन्हें एक हो जाना चाहिए।'

विभिन्न सम्प्रदाय और विचारों में परस्पर विद्रोह और घृणा नहीं होनी चाहिए वरन् इससे ऊपर उठकर सोचना होगा, सोचने की शक्ति ज्ञान द्वारा आती है। ज्ञान से मेरा तात्पर्य केवल बौद्धिक ज्ञान से नहीं वरन् संवेगात्मक बुद्धि द्वारा उत्पन्न विवेकपूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान से है।

इसाई धर्म भी अपने विशिष्ट मानवीय गुणों के कारण विश्व धर्म की स्थापना में अपना योग दे सकता है। बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में विशेष रूप से विभिन्न संस्कृतियों के बीच समानताएं और धार्मिक एवं धर्म निरपेक्ष के बीच स्वेच्छाचारी अलगाव को लेकर 'विश्व के धर्म' की श्रेणी सवालों से घिर गई। यहाँ तक कि इतिहास के प्रोफेसर अब इन जटिलताओं पर ध्यान देने लगे हैं और स्कूलों में 'विश्व के धर्म' के शिक्षण की सलाह नहीं देते हैं।

वैसे पूरे विश्व में जो धार्मिक मत प्रचलित हैं, उनमें बहाई धर्म, इस्लाम धर्म, हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म, पारसी धर्म, सिक्ख धर्म मुख्य है। वर्तमान समय में धर्म को अतिमहत्वपूर्ण मानने वाले ऑकड़े इस प्रकार हैं। जैसे हिन्दू धर्म 26 प्रतिशत, बौद्ध धर्म 33 प्रतिशत, यहूदी धर्म के 35 प्रतिशत, परम्परावादी ईसाई धर्म 51 प्रतिशत, कैथोलिक ईसाई धर्म 58 प्रतिशत, मुस्लिम धर्म 64 प्रतिशत, ईसाई धर्म उपदेशक 79 प्रतिशत, जोसेफ स्मिथपंथी ईसाई 84 प्रतिशत, यहोवापंथी ईसाई 90 प्रतिशत है।

यदि हम विश्व धर्म की कल्पना करते हैं और इसे साकार रूप में देखना चाहते हैं तो विश्व के सभी धर्मों की उन विशेषताओं को चुनना होगा जो सम्पूर्ण मानव जाति के लिए हितकारी है। हमें अनेकता में एकता के सिद्धान्त को अपनाना होगा।

यद्यपि कोई धर्म मतानुयायी अपने धर्म के अलावा किसी दूसरे धर्म के मत को स्वीकार करने के लिए तैयार न होगा। लेकिन यदि विभिन्न धर्म की विशिष्टताओं को सर्वजन सुखाय और सर्वजन हिताय की दृष्टि में रखकर संगठित किया जाय, सावधानी के साथ इन्हें श्रेणीबद्ध किया जाय तो इसे स्वीकार करने में किसी भी देश के देशवासी को स्वीकार करने में आपत्ति न होगी और हम विश्व धर्म की स्थापना में पूर्ण सफल होंगे।

धर्म कभी किसी उपासना पद्धति के स्वरूप में बांधा नहीं जा सकता। धर्म का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और उपासना का क्षेत्र संकीर्ण है। उपासना पद्धति की

इसी संकीर्ण भावना ने पूरे समाज, देश और भूमण्डल को तबाह कर दिया है। आपसी द्वेष का मूल कारण यही मंदिर, मस्जिद, गिरजा घर और गुरूद्वारा है।

काश विश्व की सम्पूर्ण मानव जाति सभी मनुष्यों के शरीर की मंदिर, मस्जिद, गिरजा घर और गुरूद्वारा मान ले और उसमें स्थित निराकार शक्ति को ईश्वर, आत्मा, अल्लाह, इसामसीह मानकर उसकी पूजा करने लग जाय, तो हर मनुष्य प्रत्येक मनुष्य को पूजने लगेगा। चाहे वह किसी देश का वासी हो। आज पूरे भूमण्डल के सभी देशों के बीच जो द्वेष है, वह मिट जायेगा, जो हिंसा और लड़ाई झगड़ा है, वह खत्म हो जायेंगे, कोई सीमा विवाद न होगा। गोले, बारूद, बम बनाना हम छोड़ देंगे और सम्पूर्ण हृदय, मस्तिष्क की ऊर्जा मानव कल्याण में लगायेंगे, तक पूरा विश्व एक परिवार होगा। जिस 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना भारत के ऋषि मुनियों ने की थी वह साकार होकर 'विश्व धर्म' के रूप में हमारे सामने आयेगी।

यह कार्य शिक्षा द्वारा ही सम्भव होगा। सम्पूर्ण विश्व के हर देश में वहाँ के विद्यालयों–विश्वविद्यालयों में प्रारम्भिक कक्षा से लेकर विश्वविद्यालय स्तर पर इसके पाठ्यक्रम, उद्देश्य, शिक्षण विधि, गुरू शिष्य सम्बन्ध, विद्यालय, परीक्षा, दीक्षान्त समारोह आदि का स्वरूप नये सिरे से निर्मित करना होगा।

विश्व धर्म की शिक्षा के लक्ष्य और उद्देश्य

1. विश्व धर्म की शिक्षा विश्व के सभी विद्यालयों में प्रारम्भिक कक्षाओं से ही आरम्भ कर देनी चाहिए। बच्चे जब छोटे होते हैं, तो उनमें संस्कारों की सीख दी जाती है। वह अस्थिर होती है अतः उनमें विश्व के सार्वभौमिक व्यावहारिक संस्कारों की स्थापना की जानी चाहिए। उच्च कक्षाओं तक क्रमशः विश्व के सभी धर्मों के उच्च माननीय आदर्शों की स्थापना पर जोर दिया जाना चाहिए।
2. विश्व धर्म का केन्द्रीय विचार मानव में सर्वोच्च मानवीय मूल्यों का विकास करना। इन आदर्शों का स्वरूप सार्वभौमिक होना चाहिए।
3. विश्व के प्राचीन (अत्याधुनिक साम्प्रदायिक विचार नहीं) धर्मों में आस्था स्थापित करना।
4. मानवीय कल्याण की भावनाओं का विकास करना विश्व धर्म की शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।
5. धर्मों के आदर्श उच्च होते हैं अतः विश्व के धर्मों में मुख्यरूप से हिन्दू, बौद्ध, ईसाई धर्मों की मूल भावनाओं से परिचित कराना, जिससे व्यक्ति, व्यक्ति का सम्मान करे। संसार में दुःखी लोगों के दुःख निवारण के उपाय, सुखी मानव जीवन के तर्कयुक्त चिन्तन को मुख्य बिन्दु मानते हुए, हिंसा, द्वेष, ईर्ष्या के स्थान पर मानव प्रेम की भावना लाना विश्व धर्म की शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।
6. छात्रों में संकीर्ण साम्प्रदायिक भावनाओं का विकास न होने पाये, इस दोष के प्रति शिक्षकों, अभिभावकों, धर्म गुरूओं को सजग रहने के लिए प्रयास।
7. वसुधैव कुटुम्बकम की भावनाओं का विकास करते हुए सभी धर्मों का सम्मान करने की सीख देना।
8. छात्रों और जिज्ञासुओं को अंधविश्वास से दूर रखने के लिए उनमें तर्कशक्ति को विकसित करते हुए वैज्ञानिक आध्यात्मिक विचार और आस्था को विकसित करना।
9. प्रकृति के व्यापक स्वरूप से परिचित कराते हुए सार्वभौमिक रूप से, उसके द्वारा लुटाये जाने वाले वरदानों से अवगत कराना, जैसे एक ही सूरज, चाँद पूरे ब्रह्माण्ड को आलोकित करते हैं, वायु घर–घर विचरण करके निःस्वार्थ रूप से जीवनी शक्ति देती है, सागर की लहरें सबको भाती है। मेघ पूरी धरती सुखा वृष्टि से आनंदित और तृप्त करते हैं। पृथ्वी से हमें अन्न, फल–फूल सब कुछ आवश्यकता की चीजें मिलती, बिना संघर्ष, बिना कुछ दिये निःशुल्क। हम भी उसी प्रकृति के अंग हैं तो हमारे इतने अपराध क्यों होते हैं। ऐसे विचारों को गम्भीरता के साथ लाने के लिए चिंतन शक्ति का विकास करना।
10. संसार के सभी मनुष्यों का शरीर मंदिर, मस्जिद और गुरूद्वारा है और उसके भीतर स्थित हमारा सर्जक भगवान, आत्मा परमात्मा या चाहे जिस नाम से पुकारें, ऐसे भावों को मानव मात्र में विकसित करते हुए अनेकता में एकता का बोध कराना।

विश्व धर्म और पाठ्यक्रमः शिक्षण की विधियाँ

विश्व धर्म के सम्प्रत्य की स्थापना और इसको विकसित करने की शिक्षा के लिए जो पाठ्क्रम बनाया जाय, उसे शिक्षा के तीन स्तरों में विभाजित किया जाना चाहिए, ये तीन स्वर होंगे– (अ) प्राथमिक (ब) माध्यमिक और (स) उच्च।

(अ)

1. प्राथमिक स्तर पर छात्रों को प्रत्यक्ष रूप से प्रकृति का अवलोकन करने के अवसरों को रखा जाय, जिससे उनमें एक सूर्य, एक चन्द्रमा द्वारा सम्पूर्ण जगत को आलोकित करने की बात हो।
2. प्रकृति के रहस्यों का बोध कराने वाले अवसर।
3. फ्रोबेल और मान्टेसरी की विधियों द्वारा शिक्षा पाठ्यक्रम में सम्मिलित हो। अनेकता में एकता का बोध कराने वाले उपकरण और रंग बिरंगी पुस्तकों द्वारा कोई सृजन करने वाला है, इसकी अनुभूति कराने के साधन।
4. शिक्षण की क्रिया और अवलोकन विधियों द्वारा शिक्षा।

(ब) माध्यमिक कक्षाओं के पाठ्यक्रम में मानवीय आदर्शों, विश्व के महान् संतों की जीवनियां और उनकी शिक्षाओं एवं आदर्शों को पाठ्यक्रम में रखा जाय।

(स) विश्व धर्म की उच्च स्तरीय स्तर पर विश्व के प्रमुख धर्म उनमें प्राप्त समानता का बोध कराया जाय। वैज्ञानिक शिक्षा मानव कल्याण के लिए दी जाय। साहित्य और कला की महत्ता विश्वस्तर पर समझाई जाय। भ्रमण विधि को भी प्रयोग में लाया जाय। विभिन्न देशों के छात्र एक दूसरे के देश में जायें और वहां के जीवन दर्शों को ग्रहण करें। उच्च स्तर पर छात्रों को गीता में वर्णित कृष्ण द्वारा दिये उपदेशों से परिचित कराया जाय।

शिक्षक छात्र और संस्था

शिक्षक अपने छात्रों की सुकुमार भावनाओं को समझे, परस्पर प्रेम का उपदेश दें। उनका सम्मान करें। आध्यात्मिक विकास को सर्वोपरि स्थान दें। छात्रों की आन्तरिक शक्तियों को समझकर उनकी हृदय भूवि को उर्वर बनावे। जिसमें प्रेम, दया, सहिष्णुता आदि के बीज अंकुरित हों। छात्र अपने गुरूजनों का विनीत भाव से सम्मान करें। विद्यालय बच्चों से सद्‌गुणों के विकास के लिए वातावरण सृजन करें।

मूल्यांकन और दीक्षान्त समारोह

मूल्यांकन छात्रों के व्यवहार आचरण के आधार पर हो। वस्तुनिष्ठ और निबन्धात्मक प्रश्नों का प्रयोग किया जाय। विश्व धर्म पर शोध के अवसर दिये जायं।

दीक्षांत समारोह प्रकृति के पुनीत प्रांगण में सम्पन्न हों। विभिन्न देशों के धर्म गुरूओं को आमंत्रित किया जाय। वे छात्रों को दिव्य गुणों की और सदैव उन्मुख रहने की शपथ करावे। सभी गणवेश सभाव हो।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *बी. प्राट : दि रेलिजस कांन्ससनेस, पृ 1*
2. *फ्लिंट : थीज्म पृ 2*
3. *काण्ट : उछत (धर्म दर्शन की रूपरेखा : रहेन्द्र पृ 54)*
4. *वही : पृ 55*
5. *एन.सी. जोशी, गॉधी पृ. 20*
6. *गीता 2/16*
7. *जोशी, एन.सी. : टैगोर पृ 101*
8. *टैगोर : जेलिजन ऑफ मैन, टैगोर साधना पृ 41*
9. *डा. एच.पी. सिन्हा, धर्म दर्शन की रूपरेखा पृ 85*
10. *स्टीफन आर. ए. क्लार्क 'विश्व धर्म और दुनियां के आदेश' धार्मिक अध्ययन 26.1 (पृ 19)*
11. *योयेल ई. तिस्कै, जातीय बनाम इंजील धर्म : दृष्टिकोण धर्म से परे शिक्षण*
12. *डॉ. शरतेन्दु : विश्व धर्म और उसका शैक्षिक स्वरूप*
13. *डॉ. शरतेन्दु : वही पृ 200*
14. *डॉ. शरतेन्दु : वही पृ 251*